साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

कविता

उसकी खोज

-प्रो. कृष्णमोहन झा
अध्यक्ष
हिन्दी विभाग, असम विश्वविद्यालय

यों समृद्धि से भरा-पूरा था बचपन का वह आकाश

सिर्फ़ एक चीज़ थी जो नहीं थी हमारे पास

जैसे चूता हुआ एक घर था

धुएँ में हाँफता एक लालटेन था दालान पर लटकाने के लिए

दवा की शीशी से बनाई गई एक डिबिया थी

जो रसोई के बाद

ताख पर ऐसे रखी जाती थी

कि घर के साथ आंगन भी प्रकाशित रहे

ढहता हुआ एक कुआँ था

जिसमें एक गरइ मछली चक्कर काटती रहती थी दिन-रात

गुड़ियाम में प्राय: भूखे दो बूढे बैल होते थे बँधे

जिनकी सजल आँखें विकल रहती थीं हमेशा

रसोई में

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

मिट्टी के दो चूल्हे और कुछ बर्तन थे

तुलसी का चौरा था आंगन के एक कोने में

साँझ में जिसकी पत्तियों को टूँगने से पहले चुटकी बजानी होती थी

ड्योढी पर कटहल का एक गाछ था

जिसके केसरिया पत्ते से हम अपने खरगोश बनाते थे

मुंडेर की ओर अग्रसर पोए की लतर थी छप्पर पर

जिसके पके बीजों के गुच्छे से

हम अपनी एड़ियाँ रंगते थे

ठाकुरबाड़ी के पीछे कपास के दो-चार गाछ भी थे

जिसकी रूई से दिन भर

दादी सूत कातती रहती थीं पीतल की तकली पर

कुदाल थी एक

जो घिस-घिसकर खुरपी बन गई थी

देहरी पर ठंडे पानी की एक सुराही थी रखी

फूल के छोटे लोटे थे दो

और एक प्रागैतिहासिक कालीन छाता भी था

इनके अतिरिक्त

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

दादी की रहस्यमयी पोटली थी

जिसमें इतनी बड़ी दुनिया

अपने हाथ-पैर समेटकर छुपी रहती थी

और कभी न मिटनेवाली चिर-अतृप्त भूख थी हमारी

यानी उजड़ी हुई एक संपन्नता थी हमारे पास

सिवा उस मर्मांतक खालीपन के

जिसे झेलते हम सब थे

लेकिन उसके बारे में कभी कुछ बोलते नहीं थे

पता नहीं उस दिन उस घड़ी उस समय वह अप्रत्याशित क्षण

किस बाँबी किस सुरंग किस कंदरा से निकलकर

मेरी जिह्वा पर बैठ गया था आकर

जब दादी से जाकर मैंने पूछा था--

मेरी माँ कहाँ है दादी ?

माँ को कभी देखा नहीं था मैंने

घर में नहीं थी उसकी एक भी तस्वीर

वह पिता के अवसन्न मौन में चुपचाप बैठी रहती थी

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

या हमारे लिए उत्पन्न

स्त्रियों की दयालुतापूर्ण आँसुओं में छलछला आती थी

यह बात ज़रूर सुनायी देती थी

कि अलग-अलग मात्रा और विभिन्न संयोजनों में

तरह-तरह से वितरित थी वह हम भाई-बहनों में

लेकिन अब

उसे साबुत देखने की मन में उठ रही थी अजीब और उत्कट धुन

दादी ने भाँप लिया उसी छन

कि उसका छोटका पोता बासी रोटी और गुड़ से बड़ा हो गया है

समेटकर मुझे पुचकारते हुए उसने कहा-

बेटा, तुम्हारी माँ नहाने गई है, उतरबरिया धार...

उतरबरिया धार !

पता नहीं कहाँ किधर कैसी धार थी वह

जहाँ से नहाकर लौटने में इतने दिन लग रहे थे माँ को

उसकी राह देखते-देखते मेरे जोड़ टटाने लगे

पेट में मरोड़ उठने लगी भूख से

और फिर पता नहीं कब और कैसे सो गया मैं

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

अगले दिन

आम और कटहल के गाछ के पीछे से सुबह निकली धीरे-धीरे

फिर सूरज बैलों की घंटियों को टुनटुनाता हुआ

खेत जोतने लगा मेड़ बाँधने लगा

फिर घरों की मुंडेरों पर दिन पगड़ी लपेटकर बैठ गया

और फिर साँझ बैलगाड़ी के पीछे-पीछे दबे पाँव

पहुँच गई गाँव

फिर रात हुई फिर सुबह और दोपहर और फिर शाम

फिर अगले दिन दुपहर में

जब बड़ी बहिन सुस्ता रही थी करके घर के काम

उससे सटकर बैठते हुए फुसफुसाकर पूछा मैंने-

दीदी, नहाकर कब लौटेगी माँ ?

चौंककर शीतलपाटी पर उठ बैठी वह

उसकी आँखों में कुछ भय, संशय और प्रेम की सजलता थी

मेरे रूखे-सूखे बाल पर हाथ फेरते हुए कहा उसने-

बाबू क्या चैहिये? लेमनचूस खाओगे ?

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

नहीं

लेमनचूस नहीं

मुझे माँ चाहिए थी

या कम से कम चाहिए थी उसकी कोई भी ख़बर

मैंने देखा कि भगवती-घर की शीतल देहरी पर

छोटकी दीदी कनिया-पुतरा से खेल रही थी

उसके बगल में जाकर मैं चुपचाप खड़ा हो गया

मेरे उदास चेहरे को देखते हुए उसने

अपने खिलौने की डलिया को एक ओर सरका दिया

और बोली- आओ

उसके पीछे-पीछे चलते हुए

हम अपने टोले से बाहर आ गए

बाँस के एक जंगल को पार करते हुए

एक पेड़ के पास आकर हम दोनों रुक गए

तब बहिन ने धीरे से मुझे कहा-

उधर देखो बाबू!

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

मैंने कहा क्या?

उसने कहा-जिसे तुम खोज रहे हो

मैंने कहा यह तो बबूल का पेड़ है दीदी

उसने कहा- ऊपर देखो न

मैने कहा ऊपर भी तो पेड़ ही है

इस बार झुककर अपनी उँगली से मुझे दिखाते हुए उसने कहा-

उस टहनी पर बैठी हुई तुम्हें माँ नहीं दिख रही?

मैंने कहा वह तो चिड़िया है दीदी!

उसने कहा- हाँ, हमारी माँ अब चिड़िया बन गई है

नाम है उसका नीलकंठ

वह अब बबूल के इसी पेड़ पर रहती है

मैं आश्चर्य से देख रहा था अपनी उस माँ को

जो अब चिड़िया थी

और जो ऊपर से हमें निहार रही थी

और जो फिर भी हमारे क़रीब नहीं आ रही थी

उसे एकटक देखते हुए

मैं उस गाछ की ओर बढ़ा

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

और जैसे ही उसके नज़दीक पहुँचा

वह फुर्र से उड़कर शीशम की टहनी पर जा बैठी

मैं शीशम के पास गया

तो वह उड़कर जामुन के पेड़ पर चली गई

और मैं दौड़ते हुए जब जामुन के नीचे पहुँचा

वह उड़कर नीले आसमान में कहीं विलीन हो गई

मेरी आँखें सहसा भर आईं

रुआँसा होकर मैंने बहिन से कहा

माँ वाली चिड़िया तो कहीं चली गई दीदी

उसने प्यार से मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए कहा-

कल वह लौटकर फिर आएगी बाबू

लेकिन मेरे लिए कल आकाश की फुनगी पर लगा फल था

जिस पर नहीं था मुझे थोड़ा भी भरोसा

मगर कुछ कह नहीं पाया

मुड़-मुड़कर देखते हुए मैं बहिन के साथ लौट आया

दालान पर पहुँचकर

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

कुएँ से पानी खींचकर उसने अपने और मेरे पैर धोए

फिर ठाकुरबाड़ी के आगे

हरशृंगार के फूल चुनने वह बैठ गई

और मैं आंगन बड़ी बहिन के पास तुरंत चला आया

आज मेरे सामने जीवन का इतना बड़ा रहस्य था खुला

जिसे फौरन उसे बताना ज़रूरी था

मैंने देखा कि कटहल के गाछ की छाँह

आधे से अधिक आंगन को भिगो चुकी है

और मद्धम होती धूप

दीदी के पैरों पर चढ़ती आ रही है

एक पल के लिए तो मैं उसे पहचान ही नहीं पाया

उसके चेहरे पर मुझे दिख गई सहसा

एक अलभ्य एवं अदृश्य स्त्री की आत्मीय छाया

मैं समझ गया

वह माँ वाली चिड़िया

सोई हुई दीदी में आकर समा गई है

और मेरे आंगन लौट आने की राह देख रही है

मैंने उत्तेजना में कहा-

ये देखो दीदी, माँ तो तुम में छुपी हुई है!

वह धड़फड़ाकर उठ बैठी

और आँखें फाड़कर मुझे टुकुर-टुकुर देखने लगी

उसके चेहरे पर क्षण भर पहले जो हमारी माँ उग आई थी

वह फिर अचानक चिड़िया बनकर कहीं उड़ गई